प्रसिद्ध ग्रन्थ 'सत् और काल' में भी सत् का उतना महत्व नहीं है जितना अस्तित्व का। हैडेगर की अस्तित्ववादी समस्यायें बहुत ही प्रारम्भिक प्रतीत होती हैं। मनुष्य के अस्तित्व का प्रश्न दार्शनिक चिन्तन का पहला सोपान है। किन्तु यही सब कुछ नहीं है। हमें तो यह विचार करना है कि सत् क्या है? और उसका वास्तविक स्वरूप क्या है? इसीलिए शोमेस्की का कथन है कि सार्त्र का दर्शन जहाँ समाप्त होता है वहाँ हैडेगर का दर्शन प्रारम्भ होता है।[1]

दार्शनिक की महानता का सामान्य रूप से एक मापदण्ड होता है। किसी दार्शनिक की मूल्य समस्यायें क्या हैं, उन पर वह कितनी गहनता से विचार करता है, विचार करने में उसके तर्क कहां तक युक्त-संगत होते हैं और वह अपने विचारों की अभिव्यक्ति कितनी समर्थ भाषा में कर सकता है — इन्हीं बातों पर उसकी महानता निर्भर करती है। पाठक उसकी रचनायें पढ़ कर उसके विचारों से जितना अधिक सहमत हो सकते हैं, वह दार्शनिक उतना ही सफल कहा जा सकता है। इस मापदण्ड को ध्यान में रखते हुए हम हैडेगर की रचनाओं पर विचार करेंगे। उसकी पुस्तक, 'परमसत् और काल' निश्चय ही उच्च कोटि की है।

हैडेगर के दार्शनिक विचार प्राचीन परम्परा के अनुकूल ही हैं। यूनानी दार्शनिकों से लेकर कान्ट और हीगेल तक तथा इनके बाद किर्केगार्ड, हसरेल, डिल्थे, शीलर और जेस्पर्स सभी से उसकी तुलना की जा सकती है और साम्य भाव खोजा जा सकता है। यहां हैडेगर का इन सभी दार्शनिकों से सम्बन्ध नहीं दिखाया जा सकता है। किर्केगार्ड ने अस्तित्ववादी दर्शन का शुभारम्भ किया था। आजकल जेस्पर्स को उसका प्रतिनिधि माना जा सकता है। उसके बारे में हैडेगर कहता है कि किर्केगार्ड ने उन्नीसवीं शताब्दी में अस्तित्व की समस्या पर गहन विचार किया और उसके अनेक पक्षों का उद्घाटन किया। किन्तु हीगेल की विचारधारा के बहाव में वह अस्तित्ववादीय (existentialistic) समस्याओं तक नहीं पहुँच सका। अस्तित्व-विषयक और अस्तित्ववादीय समस्याओं में आधारभूत अन्तर है। जब किर्केगार्ड ने हीगेल की यह कहकर आलोचना की कि उसने अपने व्यापक दर्शन में व्यक्ति के अस्तित्व की उपेक्षा की है और जब उसने अपने दार्शनिक विचार पुस्तकों में व्यक्त किये तो उसका उद्देश्य सैद्धान्तिक विवेचन करने का न होकर व्यावहारिक ही था। वह

1. "Schimanski states quite correctly that Heidegger's philosophy begins where that of Sartre ends"
The Existentialist Revolt p. 132

अपने अस्तित्ववाद के द्वारा लोगों की जीवन-यापन की विधि को मार्ग-निर्देश करना चाहता था। जेस्पर्स में भी अस्तित्व की व्याख्या का यही उद्देश्य है। हैडेगर की अस्तित्व से रुचि किर्केगार्ड और जेस्पर्स से भिन्न है। हैडेगर का मुख्य कार्य डासेन की तत्वशास्त्रीय व्याख्या करना है। यह कार्य अन्य दार्शनिकों ने कभी नहीं किया। इसलिए अस्तित्व उसे डासेन का मुख्य लक्षण दिखाई दिया।

किर्केगार्ड के अतिरिक्त हैडेगर का हसरेल से भी निकट का सम्बन्ध है। इसका उल्लेख हम पहले ही कर चुके हैं। हसरेल ने जिस दृश्यजगतशास्त्रीय विधि का प्रारम्भ किया था, वही विधि हैडेगर ने भी अपनाई। इस विधि के द्वारा हसरेल ने 'अतिक्रमित आत्मपरता' (transcendental subjectivity) के दृष्टिकोण से चेतना में आने वाले दृश्यजगत का अध्ययन और विवेचन किया था। हैडेगर के लिए यह दृश्यजगत मानव अस्तित्व है जिसके मूल में परमसत् विद्यमान है। उसने हसरेल की विधि से डासेन का अध्ययन किया किन्तु उसका दृष्टिकोण अतिक्रमित आत्मपरता का नहीं है। मानव अस्तित्व जैसा वस्तुतः है उसी रूप में वह उसका विश्लेषण करता है। वह डासेन का सम्बन्ध संसार की अन्य वस्तुओं और मनुष्यों से भी देखता है। यद्यपि हैडेगर हसरेल की दृश्यजगतशास्त्रीय विधि अपनाता है किन्तु दृष्टिकोण में अन्तर होने के कारण हैडेगर की विधि बहुत कुछ बदल जाती है।

मानव अस्तित्व

हैडेगर की सभी रचनाओं का उद्देश्य परमसत् की समस्या पर विचार करना और उसे प्रकाश में लाना है। उसके विचार से यह समस्या यूरोपीय दर्शन में परम्परा से चली आ रही है। सुकरात के पूर्व ऐनेक्सीमेंडर और परमीनाइडस के समय से ही इस पर विचार होता आ रहा है। प्लेटो और अरस्तू ने भी इस पर विचार किया था। उसके बाद इस समस्या का रूप बदल गया किन्तु किसी-न-किसी प्रकार हीगेल तक इसका प्रश्न उठता रहा है। उन्नीसवीं शताब्दी में यह प्रश्न कम महत्त्वपूर्ण समझा जाता रहा। हैडेगर ने यह प्रश्न फिर उठाया और उसे वही महत्व दिया जो यूनानी दर्शन में अरस्तू तक दिया गया था।

हैडेगर ने परमसत् का प्रश्न तो नये सिरे से उठाया किन्तु उसका प्रारम्भ उसने अपूर्व ढंग से किया। वह दर्शन के इतिहास में एक नया मोड़ लाता है। उसके विचार से दर्शन मनुष्य को समझने का विचार करता रहा है। हैडेगर ने उसे तत्वशास्त्रीय विधि से समझने का प्रयत्न किया है। किन्तु उसके विचार से

है। यदि पूर्व-कालीन महान दार्शनिकों के विचार इतनी अच्छी तरह से समझे जायें मानों उनसे व्यक्तिगत विचार विमर्श हुआ हो तो दर्शन में मौलिक कार्य आगे बढ़ाना सहज सम्भव हो जाता है।

हुसरेल का उत्तराधिकारी बनने के पूर्व हैडेगर सन् १९२७ में अपनी प्रमुख पुस्तक 'बीइंग एण्ड टाइम' (Being and Time) प्रकाशित करा चुका था। उसकी योजना के अनुसार यह पुस्तक का पहला भाग ही था। इसमें नए पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग किया गया था। इसलिए उसे समझने में कठिनाई अवश्य होती थी, किन्तु दार्शनिक समस्याओं पर नई विधि से विचार करने के कारण यह पुस्तक दार्शनिकों और सामान्य पाठकों के बीच चर्चा का विषय बन गई। हैडेगर को नई शब्दावली रचनी पड़ी, इसका एक कारण था। उसने प्राचीन यूनानी और मध्यकालीन दर्शन अध्ययन करने के बाद नई दार्शनिक समस्याओं पर प्रकाश डालने के लिए परम्परागत शब्दावली उपयुक्त नहीं पाई। नवीन विचार क्षेत्र में प्रवेश करने पर उसके अनुकूल नए शब्दों की आवश्यकता पड़ती है।

पुस्तक और पद से ख्याति प्राप्त करते ही हैडेगर ने तीन पुस्तकें और प्रकाशित कराईं। 'काण्ट एण्ड दि प्राबलम आफ मैटाफिजिक्स' में उसने 'क्रीटिक आफ दि प्योर रीजन' की नए ढंग से व्याख्या की। इसमें उसने कल्पना की अतिक्रमण शक्ति को अन्तरानुभूति (intuition) और बोध (understanding) का आधार बताया और काण्ट की रचना से अपनी पूर्व पुस्तक 'बीइंग एण्ड टाइम' का सम्बन्ध बताते हुए कहा कि वह तत्व-मीमांसा को नया आधार प्रदान करने का प्रयत्न कर रहा है। उसकी दूसरी पुस्तक 'आन दि ऐसेन्स आफ काज' थी। यह पुस्तक उसने हुसरेल को उसकी ७०वीं वर्षगांठ पर समर्पित की थी। इसमें उसने अतिक्रमण की समस्या पर विचार किया था। यह अतिक्रमण ही संसार का कारण है। हैडेगर की तीसरी पुस्तक 'ह्वाट इज मैटाफिजिक्स ?' थी। इसमें तत्व-मीमांसा का रूप और उसका आधार 'परमसत्' विवेच्य विषय है।

सन् १९३३ में प्रोफेसर हैडेगर को फीवर्ग विश्वविद्यालय का रेक्टर (Rector) चुन लिया गया। इस पद पर उसने जर्मन विश्वविद्यालयों की स्थिति पर एक भाषण दिया और उसे प्रकाशित कराया। एक साल बाद सन् १९३४ में ही उसने उस पद से त्याग-पत्र दे दिया। तदुपरांत सन् १९३६ में उसका एक निबन्ध 'होल्डरलिन और काव्य-तत्व' प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक

में उसके दार्शनिक विचारों का मोड़ दिखाई देता है। इसके बाद हैडेगर की महत्वपूर्ण रचनाओं में 'आन दि एसेंस आफ ट्रुथ' (१९४३) 'प्लेटोज डाक्ट्रीन आफ ट्रुथ' (१९४३) और 'लैटर आन ह्यूमेनिटी' (१९४७) हैं।

जर्मनी के पराभव के बाद हैडेगर को विश्वविद्यालय की सेवायें छोड़कर एकांत में रहना पड़ा। तब से वह ब्लेक फारेस्ट के एक गाँव में निवास कर रहा है। वहां चारों ओर मुक्त प्रकृति के अतिरिक्त कुछ नहीं है। उसके दार्शनिक चिन्तन के लिए वह बहुत उपयुक्त स्थान है। स्टीफन शीमेंकी[1] (Stefan Schimanski) उसके व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए लिखता है कि वह कद में छोटा, मोटे काले बाल बीच-बीच में सफेद लटें, ग्रामीण वेश-भूषा में रहने वाला व्यक्ति है। ऊंचे पर्वतीय क्षेत्र में उसकी छोटी सी झोपड़ी है। उसका भाई किसान है, खेती करता है। हैडेगर अपने पास थोड़ी सी पुस्तकें रखता है। उसे लेखन कार्य से रुचि है। वह अकेले में बैठे लिखते रहना चाहता है।

हैडेगर स्वस्थ, सुदृढ़ और हठी स्वभाव के लिए प्रसिद्ध है। उसका दार्शनिक चिन्तन अपने ही ढंग का है। उसने जो पद्धति अपनाई है वह विचित्र प्रकार की है। उसकी लेखन-शैली भी गम्भीर और गूढ़ है। अपने गहन विचारों को व्यक्त करने के लिए या तो उसने नए शब्द रच लिए हैं या प्रचलित शब्दों को उनके अप्रचलित मूल अर्थ में प्रयोग किया है। इसलिए उसके दर्शन को न तो लोग जल्दी समझ सके और न उसका प्रचार ही हो सका। जर्मनी के बाहर तो उसे प्रायः ठीक से नहीं समझा जा सका। हैडेगर स्वयं अपने दर्शन के प्रचार के पक्ष में नहीं था। उसे यह भी इच्छा नहीं थी कि कोई उसके दर्शन का समर्थन करे और उसका अनुयायी बने। फिर भी कुछ लोगों ने उसे समझने का प्रयत्न किया और उसे देश-विदेश में प्रकाशित किया।

हैडेगर पर प्रायः यह आरोप लगाया जाता है कि वह अनीश्वरवादी, मानवता-विरोधी और चरम-सीमा का शून्यवादी है। किन्तु उसने स्वयं इन सब आरोपों का खण्डन किया है। वह अपने दर्शन का विषय परमसत् का यथातथ्य रूप (Being-as-such) मानता है। अस्तित्व से उसकी उतनी रुचि नहीं है। उसने कहा है कि मैंने इसीलिए अपने ग्रन्थ का नाम 'अस्तित्व और काल' न रखकर 'परमसत् और काल' चुना है। मनुष्य के अस्तित्व का प्रश्न उसका मुख्य विषय नहीं है। फिर भी उसके दर्शन का अध्ययन करने वाले विद्वानों का कथन है कि उसके

1. Foreword to 'Existence and Being' p. ix

वस्तुओं की भाँति एक साधारण वस्तुमात्र रह जायेगा। अमरत्व की बातों को वह कल्पित कहानियाँ मात्र समझता है। उनका सम्बन्ध मनुष्य और ईश्वर के बीच किसी सम्बन्ध से नहीं है। उसके विचार से रीति-नीति या धार्मिक कार्य मनुष्य को ईश्वर के निकट नहीं पहुँचा सकते हैं। ये सब तो भावुकता की बातें हैं। हैडेगर के इन विचारों से प्रतीत होता है कि वह ईसाइयत का विरोधी है। किन्तु यह धारणा सत्य नहीं है। वह परमसत् की भाँति ईश्वर को अपने अन्दर अनुभूति का विषय मानता है। वस्तुगत रूप में विवेचन भले ही न हो सके किन्तु मनुष्य आत्मगत रूप से उसे जान सकता है। उसका जानना भी जानना नहीं कहा जा सकता है। मनुष्य ईश्वर को अपने अस्तित्व के साथ अपने में ही अनुभव करता है।

इससे स्पष्ट है कि हैडेगर ईश्वर को स्पष्टतः अस्वीकार नहीं करता है किन्तु उसे कोष्ठ बद्ध कर देता है। उसे विश्वास है कि उसकी परमसत् की अवधारणा में ईश्वर के लिए उपयुक्त स्थान सुरक्षित है। मनुष्य अपने प्रामाणिक अस्तित्व में परमसत् को पाकर ईश्वर की अनुभूति भी कर लेगा।

आलोचना

हैडेगर के अस्तित्ववाद की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसमें सत् का विशद विश्लेषण मिलता है। मनुष्य का अस्तित्व ही वास्तव में अस्तित्व है और वह भी सत् सापेक्ष है। इसलिए हैडेगर मानव अस्तित्व में उतनी रुचि नहीं रखता है जितनी सत् के रहस्य के सम्बन्ध में। यही कारण है कि वह अपने दर्शन को अस्तित्ववादी नहीं कहलाना चाहता है। हैडेगर की दृष्टि में इस प्रकार अस्तित्व की अवहेलना नहीं होती है। मानव अस्तित्व चाहे निरपेक्ष रूप में स्वतन्त्र न हो किन्तु सत् का सुदृढ़ आधार प्रदान कर उसे अन्य अस्तित्ववादियों से अधिक गहनता और गम्भीरता प्राप्त हुई है। नैज्ञानिक भौतिक मानववादियों को चाहे यह अनुचित प्रतीत हो किन्तु तत्व-मीमांसा में आस्था रखने वाले हैडेगर के प्रयास की सराहना ही करेंगे।

हैडेगर सत् की समस्या सुलझाने के लिए असत् या 'न-कुछ' की उद्-भावना करता है। इन दोनों की ऐसी स्थिति है कि यह कहना कठिन हो जाता है कि उनमें से अन्तिम कौन है। जैसे शंकर के ब्रह्मवाद को मायावाद कहकर आलोचकों ने सम्बोधित किया है वैसे ही हैडेगर के दर्शन को भी, अ-सत्वाद कहा जा सकता है।

सत् से संसार के अस्तित्व की उत्पत्ति कैसे होती है? इस प्रश्न पर प्रकाश डालते हुए हैडेगर ने एक स्थान पर लिखा था कि ईश्वर असत् से सब कुछ रचता

है। उसका यह कहना शंकर के ईश्वर द्वारा माया से संसार की रचना करना जैसा ही है। शंकर के सृष्टि-रचना सम्बन्धी विचार पर जो आलोचनाएँ की जाती हैं वे हैडेगर पर भी लागू हो सकती हैं।

यही नहीं, हैडेगर की दृष्टि में मनुष्य इस संसार में फेंक सा दिया गया है, वह यहाँ खोया हुआ अपरिचित सा और गृहविहीन पड़ा है। प्रश्न यह है कि क्या हम वस्तुतः अपने को ऐसा ही अनुभव करते हैं, यह तो मानव जीवन का एकांगी चित्र है। इसके साथ आशा, आत्मविश्वास, सुरक्षा आदि की भावना भी उठा करती है। हैडेगर इस ओर कदापि नहीं देखता है। यह उसका पूर्वाग्रह ही है।

पूर्व पृष्ठों में हमने हैडेगर के मृत्यु-विषयक विचारों का विवेचन किया है। हैडेगर इस तथ्य पर बहुत बल देता है कि मृत्यु का मनुष्य से घनिष्ट सम्बन्ध है। हर व्यक्ति की अपनी मृत्यु अवश्यंभावी है। एक व्यक्ति के लिए कोई दूसरा व्यक्ति मर कर उस व्यक्ति को सदा के लिए मृत्यु से छुटकारा नहीं दिला सकता है। हैडेगर की यह बात बहुत साधारण सी है। एक व्यक्ति अपनी मृत्यु से मरे और फिर दूसरे की मृत्यु से भी मरे कदापि सम्भव नहीं है। मृत्यु ही क्या ऐसी अनेक बातें हैं जो मनुष्य के अपने व्यक्तित्व से ही जुड़ी रहती हैं। एक व्यक्ति के बदले दूसरा कोई न प्रेम कर सकता है, न क्रोध या घृणा ही कर सकता है। मैं ज्ञान प्राप्त करने का श्रम किसी दूसरे के लिए नहीं उठा सकता हूँ। वास्तव में मेरी सब सम्भावनायें अपनी हैं उन्हें कोई दूसरा मेरे लिए पूरा नहीं कर सकता है।

यद्यपि हैडेगर की सब रचनायें श्रम-साध्य चिन्तन के बाद लिखी प्रतीत होती है किन्तु उनमें एकांगी और पूर्वाग्रह पूर्ण विचार मिलते हैं। तत्व-मीमांसा और उसकी आधारभूमि की ओर वह इतना अधिक आकृष्ट है कि व्यावहारिक जीवन, नैतिकता और धर्म पर अधिक देर टिकना पसंद नहीं करता है। मनुष्य और उसका संसार हैडेगर की दृष्टि में द्वितीयक महत्व रखते हैं।